



ISSN: 3049-2017

IJMH 2026; 3(1): 87-92

© 2026 IJMH

www.themultijournal.com

Received: 24-01-2026

Accepted: 09-02-2026

Publish : 10-02-2026

डॉ० मीनाक्षी कोठारी

विभागाध्यक्ष, योग विज्ञान विभाग,
डी. डी. कॉलेज, देहरादून
(उत्तराखण्ड), भारत

गिरीश पाठक

शोध-छात्र, योग विज्ञान विभाग,
स्पर्श हिमालय विश्वविद्यालय (पूर्व में
हिमालयीय विश्वविद्यालय), फतेहपुर
टाण्डा, डोईवाला, देहरादून
(उत्तराखण्ड), भारत

Correspondence:**गिरीश पाठक**

शोध-छात्र, योग विज्ञान विभाग,
स्पर्श हिमालय विश्वविद्यालय (पूर्व में
हिमालयीय विश्वविद्यालय), फतेहपुर
टाण्डा, डोईवाला, देहरादून
(उत्तराखण्ड), भारत

आधुनिक समय में परिवर्तित परिवेश से उत्पन्न मानसिक विकारों में हठयोगिक षट्कर्म (त्राटक क्रिया) एवं आयुर्वेदिक पंचकर्म (शिरोधारा) की महत्ता एवं उपयुक्तता।

डॉ० मीनाक्षी कोठारी, गिरीश पाठक

शोध सारांश

आधुनिक समय में परिवर्तित परिवेश में व्यक्ति अपने और अपने परिवार की देखभाल में इतना व्यस्त रहता है कि वह अपने शरीर पर ध्यान ही नहीं दे पा रहा है जिसके फलस्वरूप उसे इस युवावस्था में ही स्वास्थ्य सम्बन्धी कई समस्याओं से जूझना पड़ता है। ऐसा परिवर्तित जीवनशैली, पारम्परिक खान-पान की आदतों में परिवर्तन और परिवर्तित सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था के कारण होता है। इसलिए अधिकांश व्यक्तियों को अनेकानेक स्वास्थ्य सम्बन्धी मानसिक विकारों से जूझना पड़ रहा है। जिसके कारण अत्यधिक बहुप्रचारित, बहुप्रचलित चिकित्सा पद्धतियाँ भी इस समस्या के निराकरण में विफल होती जा रही हैं। और आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में भी मानसिक विकारों को रोकना एक महत्वपूर्ण चुनौती के रूप में स्वीकार किया जा रहा है। इन विकारों के उपचार हेतु अत्यधिक संख्या में मानसिक दोषों से ग्रस्त व्यक्तियों को कई प्रकार की चिकित्सा पद्धतियों का उपयोग करना पड़ रहा है। जिसके चलते प्राचीन आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति पर भी लोगों का ध्यान केन्द्रित हो रहा है। और आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति में रुचि भी उत्पन्न हो रही है। इसलिए, वर्तमान परिवेश में आयुर्वेद शास्त्र की ओर लोगों का बढ़ता रुझान यही सिद्ध कर रहा है कि प्राचीन चिकित्सा पद्धतियाँ आज भी उपयोगी ही नहीं अपितु अनुपम हैं।

आधुनिक समय में योग स्वास्थ्य के लिए जितना लाभप्रद है; उतना ही यौगिक क्रियाओं को करने से पूर्व शारीरिक एवं मानसिक रूप से शुद्धिकरण भी आवश्यक है। जिसके लिए शारीरिक एवं मानसिक व्याधियों अथवा दोषों को बाहर निकालने के लिए योग की प्रथम अवस्था हठ यौगिक ग्रन्थों में वर्णित यौगिक षट्कर्म क्रिया है।

इन षट्कर्मों के अभ्यास से शरीर की शुद्धि होती है। षट्कर्म शारीरिक एवं मानसिक रूप से शरीर से दोषों का निर्हरण करते हैं तथा शारीरिक एवं मानसिक दोषों को साम्यावस्था में लाने का भी कार्य करते हैं। षट्कर्म अर्थात् 'छः कर्म' हठयोग में बतायी गयी छः क्रियाएँ हैं। षट्कर्म द्वारा सम्पूर्ण शरीर की शुद्धि होती है एवं देह निरोग रहता है।

उसी प्रकार आयुर्वेद का शाब्दिक अर्थ 'जीवन का विज्ञान' है। आयुर्वेद स्वास्थ्य की एक ऐसी सम्पूर्ण चिकित्सा प्रणाली है, जिसका प्राचीन काल से ही पालन किया जा रहा है। आयुर्वेद के अनुसार - केवल बीमारियों से मुक्त होना ही स्वास्थ्य नहीं है; बल्कि यह शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक सन्तुलन की स्थिति है।

आयुर्वेद की अवधारणा है कि उपचार का मार्ग शरीर और मस्तिष्क में सन्तुलन स्थापित करता है और आयुर्वेदिक उपचार में व्यक्ति की जीवन-शैली तथा आहार-विहार की आदतों को बदलने पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है; साथ ही साथ दोषों में सन्तुलन स्थापित करने के लिए शमन (शान्ति) या शोधन चिकित्सा (शुद्धिकरण) की जाती है।

पंचकर्म, आयुर्वेद शास्त्र में वर्णित एक विशेष चिकित्सा पद्धति है; जो दोषों को शरीर से बाहर निकाल कर रोगों को जड़ से समाप्त करती है। यह शरीर शोधन की प्रक्रिया है, जो स्वस्थ मनुष्य के लिए भी लाभदायक है।

महर्षि चरक द्वारा चरक संहिता में आयुर्वेदिक पंचकर्म पद्धति का प्रयोजन बताते हुए कहा गया है-

प्रयोजनं चास्य स्वस्थस्य स्वास्थ्य रक्षणम्, आतुरस्य विकार प्रशमनं च।¹

आचार्य चरक के अनुसार, स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा करना एवं आतुर (रोगी) के विकारों (रोग) का पूर्णतः समन (नाश) करना ही पंचकर्म चिकित्सा का प्रमुख उद्देश्य है।

पंचकर्म अर्थात् पाँच कर्म, आयुर्वेद की उत्कृष्ट चिकित्सा विधि है। पंचकर्म को आयुर्वेद की विशिष्ट चिकित्सा पद्धति कहा जाता है। इस विधि से शरीर में होने वाले शारीरिक एवं मानसिक रोगों और उनके कारणों को दूर करने के लिये विभिन्न प्रकार की प्रक्रियाएँ प्रयोग में लाई जाती हैं। इसलिए इस अध्ययन का उद्देश्य यह निर्धारित करना है कि आधुनिक समय में परिवर्तित परिवेश से उत्पन्न मानसिक विकारों में यौगिक षट्कर्म (त्राटक क्रिया) एवं आयुर्वेद पंचकर्म (शिरोधारा) की क्या महत्ता एवं उपयुक्तता है।

कूट शब्द - मानसिक विकार, यौगिक षट्कर्म (त्राटक क्रिया), आयुर्वेद पंचकर्म (शिरोधारा)।

परिचय -

मानसिक विकार² -

वायुः पित्तं कफश्चोक्तः शारीरो दोषसंग्रहः।

मानसः पुनरुद्दिष्टो रजश्च तम एव च।³

जैसे वात, पित्त और कफ तीन शारीरिक दोष हैं। उसी तरह रज और तम मानसिक दोष हैं जो मन को प्रभावित करते हैं।

वास्तविक रूप में सत्व, रज और तम तीन ऐसे तत्व हैं जो मन को प्रभावित करते हैं। हालाँकि, इसमें भी सत्व गुण स्वभाव से शुद्ध है, इसलिए यह किसी भी मानसिक बीमारी का कारण नहीं बन सकता। अन्य दोनों गुण रज और तम मानसिक विकृति का कारण बनते हैं।

मानसिक दोषों से उत्पन्न व्याधियाँ - वासना, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या, अहंकार, अभिमान, शोक, उदासी, भय, आनन्द इत्यादि व्याधियाँ हैं जो मानसिक दोषों से उत्पन्न होते हैं।

मानसिक रोगों में प्रारम्भिक चरण मन की विकृति है, जिसके प्रभाव के परिणामस्वरूप शरीर में असन्तुलन और विकृति आती है। यदि मानसिक विकृति पैदा करने वाले कारकों को समाप्त कर दिया जाए तो शरीर में विकार आमतौर पर अपने आप दूर हो जाते हैं।

जब वात, पित्त और कफ सन्तुलित अवस्था में होते हैं, तो शरीर की प्राकृतिक प्रक्रियाएँ सम्पूर्ण होती हैं और जब ये असन्तुलित होते हैं, तो शरीर की जैविक, रासायनिक और शारीरिक प्रक्रियाओं में विकार उत्पन्न होता है। इसी तरह, रज और तम का सन्तुलन मानसिक कार्यों को दर्शाता है जो सन्तुलन में हैं, जबकि उनका असन्तुलन मानसिक रोगों को दर्शाता है। असन्तुलित दोष या धातुएँ रोग की उत्पत्ति का कारण हैं, जबकि सन्तुलित अवस्था आरोग्य की उत्पत्ति का कारण है। इसीलिए विकारों को दुःख कहा जाता है, और आरोग्य को सुख कहा जाता है।

असामान्य अवस्था के मुख्य कारक -

शरीर और मन की असन्तुलित अवस्था के लिए तीन मुख्य कारक हैं। तत्र तु खल्वेषां द्वयानामपि दोषाणां त्रिविधं प्रकीर्णं तद्यथा-
आत्येन्द्रिर्धसंयोगः प्रज्ञापराधः परिणामश्चेति।⁴

(1) असात्म्येन्द्रिर्धसंयोगः - इन्द्रियों का अपने प्राकृतिक विषयों के साथ असन्तुलित सम्बन्ध। “असात्म्य संयोग” शब्द इन्द्रियों और उनके प्राकृतिक विषयों के बीच अत्यधिक, अनुचित या गलत सम्बन्ध को सन्दर्भित करता है।

(2) प्रज्ञापराध (ज्ञान के विरुद्ध अपराध) - धी (निर्णायक बुद्धि), धृति (ग्रहणशील बुद्धि) और स्मृति (स्मरण रखने वाली बुद्धि) सभी प्रज्ञा के घटक हैं। प्रज्ञापराध इनके दुरुपयोग, अत्यधिक उपयोग अथवा अनुचित उपयोग के अभाव से होता है।

प्रभाव - काल (ऋतुओं से सम्बन्धित समय अथवा पर्यावरण से सम्बन्धित समय) का दुरुपयोग, अत्यधिक उपयोग अथवा अनुचित उपयोग से प्रभावित होना।

भले ही कुछ दोष हों, प्रत्येक कारण की विविधता, असात्म्येन्द्रियार्थसंयोग प्रज्ञापराध, और परिणामों की श्रेणी असंख्य रोगों और विकारों को जन्म देती है।

यौगिक षट्कर्म :-

घेरण्ड संहिता के अनुसार -

धौतिर्बस्तिस्तथा नेतिः लौलिकी त्राटकं तथा।

कपालभातिश्चौतानि षट्कर्माणि समाचरेत्।⁵

इस श्लोक में छः प्रकार की शारीरिक शुद्धिकरण क्रियाओं का उल्लेख किया गया है। जिसमें पहली क्रिया है- ‘धौति’। दूसरी क्रिया है- ‘वस्ति’। तीसरी क्रिया है- ‘नेति’, चौथी क्रिया है- ‘लौलिकी’ (नौलि क्रिया), पांचवी क्रिया है- ‘त्राटक’ एवं अन्तिम छठी क्रिया है- ‘कपालभाति’।

इन षट्कर्मों के प्रयोग से शरीर की शुद्धि होती है तथा दूषित विकारों का नाश भी होता है एवं अच्छे स्वास्थ्य की प्राप्ति भी होती है।

आयुर्वेदिक पंचकर्म :-

आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति के आठ अंगों में कायचिकित्सा को प्रधानतम माना जाता है और पंचकर्म कायचिकित्सा अर्थात् शरीर की चिकित्सा से सम्बन्धित रोगों में साधन के रूप में योग्य समझा जाने वाला उपाय है।

पंचकर्म का अर्थ :- पंचकर्म में दो शब्द हैं- पंच और कर्म, जिसमें पंच का अर्थ है- पाँच और कर्म का अर्थ है- कार्य; अर्थात् किसी भी कर्तव्य को करने की क्रिया को कर्म कहते हैं।

पंचकर्म की परिभाषा :-

वमन रेचनं नस्यम निरुष्णानुवासनम् ।

एतानि पंचकर्माणि कथितानी मुनिस्वरैः।⁶

अर्थात् वमन, विरेचन, नस्य, निरुह (आस्थापन), अनुवासन ये सभी पंचकर्म हैं; जो कि ऋषि मुनियों द्वारा कथित अर्थात् कहा गया है।

पंचकर्म चिकित्सा :-

पंचकर्म चिकित्सा को तीन चरणों में बाँटा गया है। ये तीन कर्म पंचकर्म को सफल बनाते हैं।

(1) पूर्वकर्म (2) प्रधान कर्म (3) पश्चात कर्म**(1) पूर्वकर्म :-****संसोधयस्य पाचन-स्नेहन-स्वेदनानि-पूर्वकर्म।⁷**

पंचकर्म द्वारा जिस व्यक्ति का शुद्धिकरण या शोधन करना है, उसकी तैयारी के लिए जो कर्म किया जाता है, उसे पूर्वकर्म कहते हैं।

(2) प्रधान कर्म :- महर्षि सुश्रुतानुसार, वमन, विरेचन, बस्ति, नस्य और रक्तमोक्षण या महर्षि चरकानुसार, वमन, विरेचन, निरूह व अनुवासन बस्ति और नस्य प्रधान कर्म हैं।

(3) पश्चात् कर्म⁸ :- प्रधान कर्म के बाद अग्नि वृद्धि एवं बलवृद्धि हेतु तथा शरीर को प्राकृतिक अवस्था में लाने के लिए किया जाने वाला कार्य पश्चात कर्म कहलाता है। यह मुख्यतः तीन प्रकार से प्रयोग में लाया जाता है। जैसे - (i) संसर्जन क्रम (ii) रसायन-वाजीकरण चिकित्सा (iii) शमन चिकित्सा।

यौगिक षट्कर्म एवं आयुर्वेदिक पंचकर्म के उद्देश्य :-**षट्कर्म के उद्देश्य -**

हठयोग एवं षट्कर्मों का उद्देश्य दो मुख्य प्राण-प्रवाहों (शरीर में जीवनीशक्ति प्रवाहक) इडा एवं पिंगला नाड़ी के बीच सामंजस्य स्थापित कर, इनके द्वारा शारीरिक एवं मानसिक शुद्धिकरण एवं सन्तुलन प्राप्त करना।

षट्कर्मों का प्रयोग शरीर में त्रिदोषों- वात, पित्त और कफ को सन्तुलित करने के लिये भी किया जाता है। आयुर्वेद एवं हठयोग के अनुसार इन त्रिदोषों के बीच असन्तुलन होने से रोग उत्पन्न होता है। शरीर को विषाक्त या दूषित तत्वों से मुक्त करने एवं आध्यात्मिक मार्ग पर सुरक्षित रूप से सफलतापूर्वक आगे बढ़ने के लिए भी प्राणायाम एवं उच्च योगाभ्यासों के पूर्व षट्कर्म के अभ्यासों का उपयोग किया जाता है।⁹

‘पंचकर्म’ का उद्देश्य -

आयुर्वेदिक पंचकर्म चिकित्सा स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा एवं रोगी के रोग को नष्ट करने हेतु प्रयोग में लाया जाता है। आयुर्वेद चिकित्सा शरीर को स्वस्थ रखने के सिद्धांतों का पालन करने और मनुष्य को रोगमुक्त बनाये रखने के उद्देश्य से एवं रोग-निवारण हेतु रोगी के शरीर को ऋतुचर्या के अनुसार शुद्ध करने की पूर्ण विधि है। रोगी के रोग का सम्पूर्ण निवारण हेतु पंचकर्म को महत्वपूर्ण चिकित्सा कर्म माना गया है।¹⁰

(1) षट्कर्म (त्राटक क्रिया)¹¹ -

षट्कर्म की पाँचवीं और सबसे महत्वपूर्ण क्रिया “त्राटक” योग अभ्यास में महत्वपूर्ण है, और दैनिक जीवन में इसके कई अनुप्रयोग हैं। योग की उच्चतम आकांक्षाओं को पूरा करने के लिए उपयोग की जाने वाली विधि के स्वास्थ्य सम्बन्धी लाभों के कारण कई नैतिक परिणाम हैं, इन लाभों को प्राप्त करने के लिए त्राटक कर्म की गहन समझ आवश्यक है।

त्राटक का अर्थ - “त्राटक” क्रिया का अर्थ है “किसी विशिष्ट बिन्दु पर गहनता से ध्यान केन्द्रित करना।” इस शीर्षक के अन्तर्गत, हम इसके उद्देश्यों को तीन श्रेणियों में विभक्त करके जान सकते हैं - (1) हम स्वयं को दर्शक के रूप में देखते हैं। (2) दृश्य हमारी दृष्टि का केन्द्र बिन्दु है, और (3) दृश्य को देखने का कार्य। इन तीनों उद्देश्यों की सहायता से स्थूल से सूक्ष्म की ओर जाने का जो अभ्यास है। वही “त्राटक क्रिया” है।

विधि - घेरण्ड संहिता के षट्कर्म प्रकरण के अन्तर्गत त्राटक क्रिया की विधि को महर्षि घेरण्ड द्वारा इस प्रकार बताया गया है।

निमेषोन्मेषकं त्यक्त्वा सूक्ष्मलक्ष्यं निरीक्षयेत्।

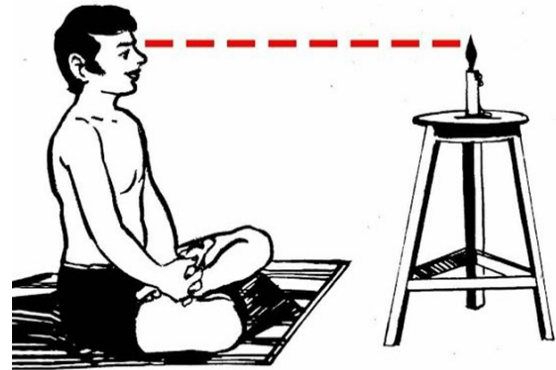
पतन्ति यावदश्रूणि त्राटकं प्रोच्यते बुधैः॥53॥

अर्थ - ज्ञानी योगियों द्वारा कथित है कि आँखों को खोलकर बिना पलकों को झपकाए उन्हें एक ही स्थिति में रोककर एक छोटे लक्ष्य पर तब तक ध्यान केन्द्रित करना जब तक आँसू न गिरने लगें, इसी प्रक्रिया को “त्राटक” कहते हैं।

त्राटक के प्रकार¹² - घेरण्ड संहिता में त्राटक के तीन अलग-अलग रूपों का वर्णन किया गया है-

(1) बहिर्त्राटक (2) अन्तरंग या अन्तर्त्राटक (3) अधोत्राटका

त्राटक के इन तीनों रूपों का अभ्यास क्रमानुसार किया जाता है। यह एक के बाद दूसरे अभ्यास को करते हुए विकास के क्रमिक चरण हैं, और पहले में निपुणता प्राप्त किए बिना दूसरे का अभ्यास नहीं किया जा सकता है।



चित्र - त्राटक

समय एवं अवधि तथा सावधानी - इसके लिए केवल सुबह और रात का समय ही ठीक है। इस अभ्यास में शारीरिक लाभ के लिए पाँच मिनट काफी हैं। हालाँकि, आध्यात्मिक लाभ के लिए लम्बे ध्यान सत्रों की आवश्यकता होती है। इसके लिए किसी योग गुरु से सलाह लेना आवश्यक है।

त्राटक के मानसिक लाभ -

(1) क्षोकानुसार इस अभ्यास को करने से यह तीन लाभ प्राप्त होते हैं। पहला, “नेत्ररोगा विनश्यन्ति”- इससे नेत्र दोष दूर होते हैं। यह त्राटक का शारीरिक लाभ है। दूसरा, “दिव्याखो प्रजायते” अर्थात् दिव्य दृष्टि की प्राप्ति होती है। यह ईश्वर की देन है। तीसरा, “शाम्भवी जायते ध्रुवम्” अर्थात् शाम्भवी सिद्धि की प्राप्ति होती है। यह इसका आध्यात्मिक लाभ है।

(2) मानसिक स्थिरता और ध्यान दृष्टि से घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं। वैचारिक संघर्ष से मानसिक अस्थिरता और असंतोष उत्पन्न होता है। इसका सबसे अच्छा उपचार त्राटक क्रिया है।

(3) त्राटक के अभ्यास के दौरान, आप दृष्टि को स्थिर बनाए रखकर अपने मानसिक विचारों को शान्त और स्थिर बना सकते हैं। आन्तरिक चेतना स्थिर होने से पीनियल ग्रन्थि खुलती है और उच्च स्थिति प्राप्त होती है।

(4) त्राटक के अभ्यास से याद्दाश्त की भी वृद्धि होती है। तन्त्रिका तन्त्र के तनाव और अनिद्रा से पीड़ित लोगों के लिए यह बहुत उपयोगी है। त्राटक से आत्मविश्वास भी बढ़ता है।

(5) इसके अभ्यास से मस्तिष्क की तरंगों पर असर पड़ता है। हमारी शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक उत्तेजना से सम्बन्ध रखने वाली ये तरंगें क्रमशः लयबद्ध हो जाती हैं और इनकी कम्पन्न आवृत्ति कम हो जाती है।

(6) यह क्रिया मन को विचारों और विकारों से मुक्त करती है, जिसमें भावनाओं से उत्पन्न विकार भी शामिल हैं। यह अभ्यास आन्तरिक उत्तेजना के सभी पहलुओं को शान्त करके शक्ति और जागरूकता प्रदान करता है।

त्राटक हमारे आत्मबल को बढ़ाता है और यह अभ्यास आध्यात्मिक ऊर्जा प्रदान करता है और ध्यान के लिए मार्ग तैयार करता है। यह कुण्डलिनी जागरण का एक सशक्त माध्यम है, इससे एकाग्रता शक्ति विकसित होती है तथा दिव्य दृष्टि प्राप्त होती है तथा आध्यात्मिक और भौतिक सुख, प्रसिद्धि और शारीरिक और मानसिक लाभ दोनों मिलते हैं तथा आध्यात्मिक शक्ति और स्मरण शक्ति दोनों बढ़ती है।¹³

इस प्रकार इन प्रभावी लाभों से प्राप्त तथ्यों की विवेचना करने से यह सिद्ध होता है कि त्राटक क्रिया आध्यात्मिक, शारीरिक व मानसिक विकारों को नष्ट करके शरीर की सभी प्रणालियों को उत्तेजित और सन्तुलित करती है और मानसिक स्पष्टता, भावनात्मक स्थिरता और बेहतर स्वास्थ्य की वृद्धि करती है। तथा मानसिक अवसादों को नष्ट कर मस्तिष्क का विकास करती है, जो कि सूचना श्रोत है।

(2) आयुर्वेदिक पंचकर्म (शिरोधारा) -

पंचकर्म प्रक्रियाओं के अतिरिक्त, आयुर्वेदिक ग्रन्थों में उल्लेखित पंचकर्म करने की अन्य विधि भी हैं। ये विधि आयुर्वेदिक ग्रन्थों में वर्णित विभिन्न स्नेहन-स्वेदन प्रकारों का संशोधित संस्करण है, जिसे केरलीय पंचकर्म के विशिष्ट नाम से जाना जाता है। इसका उल्लेख केरल के प्रसिद्ध पंचकर्म शास्त्र "धाराकल्प" में किया गया है, जिसे सामान्य भाषा में "शिर सेक" या "शिरोधारा" के रूप में सन्दर्भित किया जाता है। इस पंचकर्म चिकित्सा विधि से मानसिक और

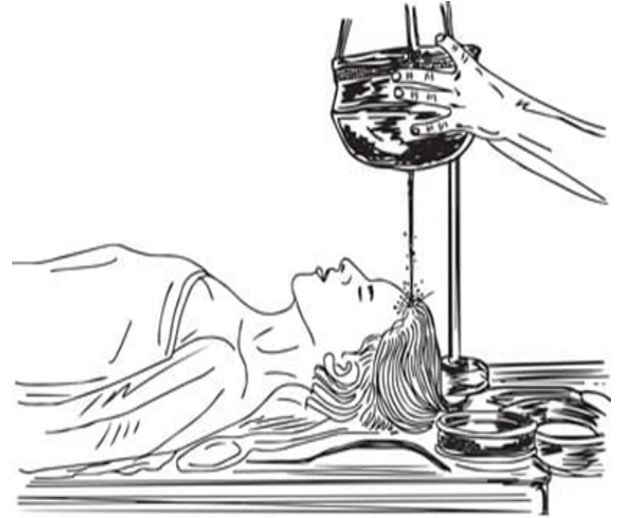
शारीरिक दोनों तरह की बीमारियों में लाभ मिलता है। ये संशोधन क्रिया निम्नवत् है -

शिरोधारा¹⁴ -

साधारण शब्दों में इस प्रक्रिया को "शिरोधारा," या "शिर:सेक" के नाम से भी जाना जाता है क्योंकि इसमें एक विशेष पात्र का उपयोग किया जाता है, जिसे धारापात्र कहते हैं। इसका उपयोग करके माथे पर औषधीय काढ़ा, सिद्ध स्नेह, दूध इत्यादि की लगातार धारा गिराई जाती है। आयुर्वेदिक ग्रन्थों में सिर के रोगों को ठीक करने की प्रक्रिया में सिर पर औषधीय काढ़ा, दूध, तैल इत्यादि की धारा गिराने की सलाह दी गई है। जो 'शिरोसेक' धाराकल्प का ही एक रूप है।

यह आचार्यों द्वारा वर्णित परिषेक स्नेहन व स्वेदन में शिर: परिषेक (शिरोसेक) के अन्तर्गत समाविष्ट है।

इस क्रिया में विशिष्ट प्रकार के धारा पात्र एवं द्रोणी (Wooden Table) का उपयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त अलग-अलग औषधीय द्रवों जैसे - क्वाथ, तक्र, तैल, घृत एवं दूध आदि का रोग एवं रोगी की स्थिति के अनुसार प्रयोग किया जाता है।



चित्र - शिरोधारा

औषध द्रव -

आयुर्वेद शास्त्रों में सिर सम्बन्धी रोगों की चिकित्सा प्रक्रिया में सिर पर दोषों एवं रोगों के अनुसार गर्म या ठण्डे औषधीय क्वाथ, तैल, क्षीर (दूध), घृत, तक्र (छाँछ) आदि की धारा गिराए जाने हेतु निर्देशित की जाती है।

शिरोधारा विधि -

1. किसी शुभ दिन सुबह को शुभ समय पर रोगी को स्वस्तिवाचन और मंगलाचरण के बाद द्रोणी में सिर पूरब की ओर करके लिटाया जाता है। रोगी के सिर के नीचे एक तौलिया रखकर उसे थोड़ा ऊपर उठाया जाता है।

2. फिर रोगी के सिर और पूरे शरीर पर तैल से अभ्यंग किया जाता है।

3. तैल रोगी की आँखों में जाने से रोकने के लिए, केले के पत्तों को कपड़े में लपेटकर एक पट्टी बनाकर रोगी के सिर पर भौंहों के ऊपर बाँध दिया जाता है।

4. रोगी के सिर के पास दो परिचारक खड़े होते हैं। पहला धारापात्र का ऊपरी हिस्सा पकड़े रहता है, और दूसरा उसमें द्रव या तैल डालता है और फिर नीचे से द्रव या तैल इकट्ठा करके उसे फिर से धारापात्र में डालता है।

5. धारापात्र में लटकाई गई वर्ति की सहायता से तैल या औषध द्रव धीरे-धीरे रोगी के माथे पर गिरता रहता है। साथ ही परिचारक धारापात्र को आगे-पीछे व दाएँ-बाएँ हिलाता रहता है। वर्ति रोगी के सिर से 3-4 अंगुल ऊपर रहनी चाहिए।

6. इस प्रकार पुनः पुनः द्रोणी के छिद्र के नीचे पात्र में एकत्रित तैल या औषध द्रव को ऊपर के धारापात्र में डालते रहते हैं। यह प्रक्रिया 45 मिनट से 90 मिनट तक तथा 14 से 21 दिन तक लगातार प्रतिदिन की जाती है।

पश्चात् कर्म -

(1) रोगी के सिर को अच्छी तरह से साफ कपड़े या तौलिए से साफ कर दें।

(2) अगर ठण्डे द्रव से शिरोधारा की गयी हो तो ठण्डे जल से सिर को धोना चाहिए एवं यदि गर्म द्रव से शिरोधारा की गयी हो तो गर्म जल से सिर को धोना चाहिए।

(3) अन्त में रोगी को आराम करने को कहें तथा ताजा व गरम भोजन खाने को कहें। जितने दिन तक शिरोधारा की गयी हो उतने ही दिन तक रोगी को पथ्य पालन कराना चाहिए।

शिरोधारा के शारीरिक एवं मानसिक प्रभाव -

(1) सिर सम्बन्धी रोग (2) अनिद्रा (3) चित्तोद्वेग (चिन्ता विकार)

(4) मनोवसाद या तनाव (Depression) (5) उन्माद (पागलपन)

(6) हृदय रोग (7) मानसिक रोग - मिर्गी, अतत्वाभिनिवेश (अज्ञानी), अत्यधिक मदिरापान आदि।

शिरोधारा गहरी आराम देने वाली और आराम की स्थिति पैदा करने वाली चिकित्सा है। यह एक शुद्धिकरण और कायाकल्प करने वाली चिकित्सा है जो विषाक्त पदार्थों और मानसिक थकावट को खत्म करती है और साथ ही तनाव और केन्द्रीय तन्त्रिका तन्त्र पर पड़ने वाले बुरे प्रभावों से भी राहत दिलाती है। शिरोधारा के गुणकारी प्रभावों से वाणी और मन स्थिर होते हैं, अर्थात् मानसिक विकार नष्ट होते हैं एवं शारीरिक बल में वृद्धि होती है। तथा यह शरीर की सभी धातुओं के साथ-साथ मुख्यतः शुक्र एवं रक्त धातु का पोषण करती है। जिससे इन तथ्यों की विवेचना करने से यह सिद्ध होता है कि शिरोधारा मानसिक अवसादों को नष्ट कर मस्तिष्क का

विकास करती है, जो कि सूचना श्रोत है। शिरोधारा के गुणकारी प्रभावों से स्वस्थ मस्तिष्क का निर्माण होता है, जिससे कारण शरीर के समस्त अवयव विधिवत् रूप से अपना कार्य करते हैं, जिसके फलस्वरूप मस्तिष्क व शरीर की कार्यक्षमता या बल में वृद्धि होती है।

निष्कर्ष -

उपरोक्त साहित्य समीक्षा से यह कहा जा सकता है कि समस्त यौगिक ग्रन्थों - हठप्रदीपिका, घेरण्ड संहिता, उपनिषदों में वर्णित षट्कर्म त्राटक क्रिया एवं आयुर्वेद ग्रन्थों - चरक संहिता, सुश्रुत संहिता आदि में वर्णित पंचकर्म शिरोधारा द्वारा शरीर के मानसिक विकारों को शुद्ध करके उन्हें सन्तुलित अवस्था में लाया जा सकता है तथा शरीर को मानसिक रोगों से मुक्त रखकर दिर्घायु की प्राप्ति की जा सकती है। षट्कर्म त्राटक एवं पंचकर्म शिरोधारा के उपयोग से समस्त मानसिक विकारों का समूल नाश होने के साथ-साथ शरीर में ऊर्जा, बल की भी वृद्धि होती है। इसलिए भौतिक शरीर की शुद्धि के लिए षट्कर्म एवं पंचकर्म क्रियाओं का निरन्तर उपयोग अत्यन्त लाभकारी है। इसी के साथ इस साहित्यिक समीक्षा से यह पता चला कि प्रशिक्षित गुरु के मार्गदर्शन में षट्कर्म त्राटक क्रिया एवं पंचकर्म शिरोधारा क्रिया का प्रयोग करना सुरक्षित होता है और स्वास्थ्य को सुरक्षित रखने और शरीर को रोगमुक्त रखने में इन प्रक्रियाओं की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। तथा उपर्युक्त समीक्षा से यह भी स्पष्ट होता है कि प्राचीन योग व आयुर्विज्ञान की शोधन या शुद्धिकरण क्रियाएँ षट्कर्म एवं पंचकर्म हैं। इनका सिद्धान्त शोधन व शमन पर आधारित है, इनका उद्देश्य जीवन में स्वास्थ्य, सन्तुलन व साम्यावस्था स्थापित करना है।

सन्दर्भ

1 च. सू. 30/26

2 गौड़, शिवकुमार, आयुर्वेदीय शरीर क्रिया विज्ञान, 1973, अध्याय - 02 (भाग-1), पृष्ठ संख्या - 14-16

3 अत्रिदेव कविराज, चरकसंहिता, 1948, भाग-1 (सूत्र-निदान-विमानात्मक), संस्करण - द्वितीय, अध्याय-01 (सूत्रस्थानम्), श्लोक संख्या - 57, पृष्ठ संख्या - 14

4 अत्रिदेव कविराज, चरकसंहिता, 1948, भाग-1 (सूत्र-निदान-विमानात्मक), संस्करण - द्वितीय, अध्याय-06 (विमानस्थानम्), श्लोक संख्या - 06, पृष्ठ संख्या - 534

5 सरस्वती, स्वामी निरंजनानन्द - घेरण्ड संहिता; बिहार योग भारती द्वारा संस्करण 2011, अध्याय - 1 (षट्कर्म प्रकरण), श्लोक संख्या - 12, पृष्ठ संख्या - 23; योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, गंगा दर्शन, मुंगेर, बिहार, भारत।

6 शारंगधर संहिता (उत्तर खण्ड) - 8/63

- 7 सुश्रुत संहिता - सूत्र स्थान (डलहण टीका) - 5/3
- 8 शुक्ल, डॉ० विद्याधर, कायचिकित्सा (चतुर्थ भाग), पुनर्मुद्रित संस्करण 2010, अध्याय - 1 (विशय प्रवेश विज्ञान), पृष्ठ संख्या - 10
- 9 सरस्वती, स्वामी सत्यानन्द - आसन प्राणायाम मुद्रा बन्ध; चतुर्थ संशोधित संस्करण 2015, अध्याय -8 (षट्कर्म), पृष्ठ संख्या - 524, 525; योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत।
- 10 शर्मा, प्रोफेसर अजय कुमार - कायचिकित्सा (चतुर्थ भाग); संस्करण - 2014, अध्याय - 1 (कायचिकित्सा : पंचकर्म), पृष्ठ संख्या - 4; चौखम्भा पब्लिशर्स, वाराणसी।
- 11 सरस्वती, स्वामी निरंजनानन्द, घेरण्ड संहिता, 2011, अध्याय - 1 (शट्कर्म प्रकरण), श्लोक संख्या - 53, पृष्ठ संख्या - 106,107
- 12 सरस्वती, स्वामी निरंजनानन्द, घेरण्ड संहिता, 2011, अध्याय - 1 (शट्कर्म प्रकरण), पृष्ठ संख्या - 107-112
- 13 Anshu Chundawat, Srikanta Kumar Panda. Tratak and its benefits: A Review. J Ayurveda Integr Med Sci 2023;05:61-65. <http://dx.doi.org/10.21760/jaims.8.5.10>. ISSN: 2456-3110
- 14 शर्मा, प्रोफेसर अजय कुमार, कायचिकित्सा (चतुर्थ भाग), संस्करण - 2014, अध्याय - 9 (केरलीय पंचकर्म), पृष्ठ संख्या - 294, 299